बिहारीलाल

शृंगार सम्बन्धी मुक्तक-काव्यधारा में बिहारी का स्थान

शृंगार रस अन्य सभी रसों की अपेक्षा कहीं अधिक मधुर, मार्मिक एवं आकर्षक होता है। साहित्य के क्षेत्र में इसे 'रसराज' की उपाधि से विभूषित किया गया है, क्योंकि यही एक ऐसा रस है, जिसमें अधिकांश मनोभावों का वर्णन होता है तथा इसके स्थायीभाव 'रति' का इतना व्यापक एवं विशद क्षेत्र है कि विश्व का कोई भी पदार्थ इसके आकर्षक-सूत्र से बचा नहीं है। इस रस में सम्पूर्ण जगत् को रसमय करने की अपूर्व क्षमना है। इसीलिएं 'शृंगारी चेत्कविः काव्ये जातं रसमयं जगत्' कहकर इस रस के मर्मज्ञ कवियों की कृतियों को सम्पूर्ण विश्व को रसमय करने में सक्षम एवं सशक्त बताया गया है। वैसे भी शृंगार रस अन्य सभी रसों की अपेक्षा अधिक प्रभावोत्पादक होता है, क्योंकि इसमें प्रेम का प्राधान्य होने के कारण अधिक भावोत्कृष्टता एवं भाव-प्रेषणीयता विद्यमान रहती है। इसका सीधा सम्बन्ध मानव-जीवन से होता है। इसीलिए मानव मात्र का इसकी ओर सहज आकर्षण होना अत्यन्त स्वाभाविक है। इस रस का सर्वाधिक उत्कर्ष मुक्तक काव्य में देखा जाता है।

शृंगार सम्बन्धी मुक्तक-काव्य-धारा का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि मुक्तक-काव्य का श्रीगणेश ऋग्वेद से हुआ है। ऋग्वेद में विभिन्न देवी-देवताओं से सम्बन्धित स्वतन्त्र सूक्त मिलते हैं, जो मुक्तक-काव्य के आरम्भिक स्वरूप को प्रस्तुत करते हैं। ऋग्वेद की यही मुक्तक-परम्परा संस्कृत एवं प्राकृत के अन्तर्गत दिखाई देती है। मुक्तक-काव्य 'वह काव्य है जो पूर्वापर निरपेक्ष एवं स्वतः पर्यवसित पद्य तक सीमित हो।' आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा भी है—"मुक्तक में प्रबन्ध के समान रस की धारा नहीं रहती, जिसमें कथा-प्रसंग में अपने को भूला हुआ पाठक मग्न हो जाता है। इसमें रस के ऐसे छींटे पड़ते हैं जिनसे हृदय-कलिका थोड़ी देर के लिए खिल उठती है। यदि प्रबन्ध-काव्य एक विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता है। उसी से यह सभा-समाजों के लिए अधिक उपयुक्त होता है। उसमें उत्तरोत्तर अनेक दृष्यों द्वारा संघटित पूर्ण जीवन या उसके किसी एक पूर्ण अंग का प्रदर्शन नहीं होता, बल्कि कोई एक रमणीय खण्ड-दृश्य इस प्रकार सामने ला दिया जाता है कि पाठक या श्रोता कुछ क्षणों के लिए मन्त्रमुग्ध सा हो जाता है।"[1] इस तरह मुक्तक-काव्य में समग्र जीवन या जीवन के किसी पूर्ण अंग का प्रदर्शन तो नहीं होता, किन्तु सम्पूर्ण जीवन या जीवन के सामान्य क्रिया व्यापारों के मेल में आने वाले किसी खण्डचित्र को लेकर ही बन्धान किया जाता है, उन चित्रों में सरसता एवं मार्मिकता अधिक होती है और वे मानव-मनोवृत्तियों

को झंकृत करने में अधिक सफल होते हैं। इसीलिए डॉ. ग्रियर्सन ने भी मुक्तक काव्य की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि "भारतीय काव्यानन्द का सम्यक् रूप में यदि प्रस्फुटन हुआ है तो वह उसके मुक्तक-काव्य में ही हुआ है।" वास्तव में भारतीय मुक्तक-काव्य के अन्तर्गत ऐसे-ऐसे रमणीय भावों की योजना की जाती है, जिनका अनुशीलन करते ही हृदय मुक्तावस्था को प्राप्त हो जाता है।

भारतीय मुक्तक-काव्य की शृंगार सम्बन्धी रचनाओं के अन्तर्गत सर्वप्रथम स्थान हाल रचित 'गाथा सप्तशती' का है। इसकी रचना ईसा की द्वितीय शताब्दी के आस-पास हुई थी। तदनन्तर 'अमरुक शतक' आता है। इस शतक ने भी शृंगार-मुक्तक सम्बन्धी काव्य-धारा को अग्रसर करने में पर्याप्त योगदान दिया है। इसके पश्चात् गोवर्द्धन कृत 'आर्या-सप्तशती' आती है, जिसका हिन्दी की शृंगार सम्बन्धी मुक्तक रचनाओं पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा है। शृंगार एवं प्रेम सम्बन्धी मुक्तक-धारा को आगे बढ़ाने में संस्कृत के 'शृंगार-तिलक', 'घटकर्परि', भर्तृहरिकृत 'शृंगार शतक', बिल्हण कृत 'चौर पंचाशिका' आदि ने भी पर्याप्त सहायता दी है। इसके उपरान्त जयदेव कृत 'गीत-गोविन्द' ने भी शृंगार सम्बन्धी मुक्तक-काव्य-धारा को प्रवाहित करने का सराहनीय कार्य किया है, क्योंकि शृंगार-मुक्तकों के अन्तर्गत जिस ऐन्द्रिय शृंगारिकता का प्राधान्य होता है, वह 'गीत-गोविन्द' के अन्तर्गत पर्याप्त मात्रा में मिलती है तथा इसी से प्रभावित होकर विद्यापति ने भी अपने मुक्तक-पदों की रचना की है। मैथिल-कोकिल विद्यापति के पदों में हमें सर्वप्रथम हिन्दी के शृंगार-मुक्तक की स्वच्छन्द काव्य-धारा के दर्शन होते हैं। क्योंकि विद्यापति ने राधा-कृष्ण की शृंगारिक चेष्टाओं का जो मर्मस्पर्शी वर्णन किया है, उसमें हिन्दी की रीतिकालीन शृंगारिक परम्परा के तत्व विद्यमान हैं। विद्यापति के उपरान्त सूर के मुक्तक-पदों में भी रीति-बद्ध शृंगार चित्र पर्याप्त मात्रा में अंकित हुए हैं। विद्यापति की भाँति सूर ने भी राधा और कृष्ण की शृंगारिक चेष्टाओं, हावभावों आदि का लौकिक नायक-नायिकाओं की भाँति ही वर्णन किया है। इसी तरह अन्य कृष्ण भक्त कवियों ने भी शृंगार का वर्णन किया है। इन भक्त कवियों के शृंगार-वर्णन में भले ही अलौकिकता हो, किन्तु लौकिक जीवों पर उसमें वर्णित शृंगार का प्रभाव अच्छा नहीं पड़ता। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा भी है कि 'जिस राधा और कृष्ण के प्रेम को इन भक्तों ने अपनी गूढ़ातिगूढ़ चरम भक्ति का व्यंजन बनाया, उसको लेकर आगे के कवियों ने शृंगार की उन्मादकारिणी उक्तियों से हिन्दी-काव्य को भर दिया।"[1] इसका दुष्परिणाम और कुछ हुआ हो इसमें सन्देह है, किन्तु इतना तो सत्य ही है कि सूर की शृंगार भावना से प्रभावित होकर ही कुछ राम-भक्त कवियों ने भी पति-पत्नी भाव की प्रधानता का चित्रण करते हुए राम-सम्बन्धी शृंगार मुक्तकों की रचना की। इनमें से श्री रामचरणदास प्रसिद्ध हैं, जिन्होंने 'कौशल खण्ड' में राम की रासलीला, विहार आदि के अनेक शृंगारपूर्ण अश्लील वृत्तों की कल्पना की है।

भक्तिकाल के उपरान्त रीतिकाल के आते ही शृंगार-मुक्तकों का प्राधान्य हो गया। इस युग के रीतिबद्ध एवं रीत्यनुसारी कवि काव्यांगों के लक्षणों और उदाहरणों सहित अपने-अपने शृंगार सम्बन्धी मुक्तकों की रचना करने लगे, जिनमें नायिका-भेद, संयोग एवं वियोग-वर्णन, ऋतु-वर्णन, रति स्थायीभाव के साथ-साथ शृंगार के आलम्बन एवं उद्दीपन विभाव, अनुभाव, संचारीभाव आदि का निरूपण बड़े अनूठे ढंग से किया जाने लगा। इन रीत्यनुसारी शृंगार-मुक्तक लिखने वालों में सर्वप्रथम बिहारी आते हैं। रीतिकालीन शृंगार रस के मुक्तक-ग्रन्थों में 'बिहारी-सतसई' सबसे अधिक लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध है। इन 700 दोहों के

आधार पर जितनी ख्याति बिहारी को प्राप्त हुई है उतनी अन्य किसी कवि को प्राप्त नहीं हुई। 'बिहारी-सतसई' की हिन्दी, संस्कृत, फारसी, गुजराती, उर्दू आदि अनेक भाषाओं में टीकाएँ लिखी गई हैं। आज लगभग 50 से अधिक टीकाएँ हिन्दी के केवल इसी ग्रन्थ पर मिलती हैं। बिहारी के अतिरिक्त शृंगार-मुक्तकों की परम्परा में बेनी, मतिराम, कुलपति मिश्र, सुखदेव मिश्र, कालिदास त्रिवेदी, रसनिधि, नृपशंभु, नेवाज, देव, श्रीपति, कृष्ण कवि, तोषनिधि, रसलीन, दूलह, बेनी प्रवीन, पद्माकर, ग्वालकवि, हठीजी, रामसहायदास, पजनेस, द्विजदेव आदि कितने ही कवि आते हैं। परन्तु शृंगार रस के निरूपण में जो सफलता बिहारी को मिली है, वह अन्य किसी भी कवि को प्राप्त नहीं हुई है। इसका मुख्य कारण यह है कि काव्य-रीति का पूर्णतया पालन करते हुए मानव-प्रकृति के कोमल मनोभावों का वर्णन जितनी कुशलता एवं रसात्मकता के साथ बिहारी ने किया है, उतना अन्य कोई भी कवि नहीं कर सका है। तुलसी के 'रामचरितमानस' के उपरान्त 'बिहारी सतसई' ही ऐसी रचना है, जिसने अपनी रसात्मकता, कलात्मकता, लाक्षणिकता, वचन-विदग्धता आदि के कारण हिन्दी-प्रेमियों का हृदय सबसे अधिक अपनी ओर आकृष्ट किया है। बिहारी ने बड़ी निपुणता के साथ बाह्य एवं आभ्यन्तर स्वभाव का निरूपण करते हुए नायिका-भेद, नख-शिख, हाव-भाव आदि शृंगार के विविध विषयों का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

बिहारी की तुलना के लिए प्रायः देव का नाम लिया जाता है। परन्तु महाकवि देव ने मानव-स्वभाव के रहस्यों का चित्रण करने के लिए जिस सवैया जैसे चार पंक्तियों के बड़े छन्द को अपनाया है, बिहारी ने वही कार्य अपने छोटे से दोहे में बड़ी विदग्धता के साथ कर दिखाया है। यह माना कि संगीतात्मकता एवं मसृणता की दृष्टि से देव में भी कोई कमी नहीं दिखाई देती, परन्तु लोकप्रियता की दृष्टि से यदि देव और बिहारी की तुलना की जाय, तो देव बिहारी की समता में कहीं नहीं ठहरते। यह माना कि रसार्द्रता की दृष्टि से देव की कविता पर्याप्त उत्कृष्ट हैं, किन्तु जहाँ तक तन्मयता एवं द्रवणशीलता का प्रश्न है, बिहारी में देव से कहीं अधिक उक्त दोनों बातें मिलती हैं। इसके साथ ही डा० नगेन्द्र का कथन अक्षरशः सत्य है कि "बिहारी में सौन्दर्य के सूक्ष्म तत्व को ग्रहण कर शब्द-बद्ध करने की जैसी अपूर्व क्षमता है, वैसी देव अथवा रीति-युग के किसी भी कवि में नहीं है।"[1] यही कारण है कि बिहारी हिन्दी की शृंगार सम्बन्धी मुक्तक-काव्य-धारा के प्रतिनिधि कवि हैं, वे रीति-शृंगार-सम्बन्धी काव्य के युग-प्रवर्तक हैं, रीत्यनुसारी काव्य लिखने वाले कवियों के पथ-प्रदर्शक हैं और शृंगार के अधिष्ठाता कवि हैं। निस्संदेह सूर और तुलसी के उपरान्त हिन्दी-काव्य के क्षेत्र में यदि किसी कवि को सर्वाधिक मान-सम्मान प्राप्त हुआ है तो वे बिहारी ही हैं, क्योंकि बिहारी के दोहों ने साधारण जनों एवं काव्य-मर्मज्ञों को समान रूप से प्रभावित किया है। इसीलिए कविता के प्रभाव की दृष्टि से बिहारी का स्थान रीत्यनुसारी काव्य लिखने वाले कवियों में सर्वोच्च माना जाता है।